SKU शोध संचार

(INTERNATIONAL PEER REVIEWED E-RESEARCH JOURNAL)

Impact Factor SJIF 2025 – 5.306

अंक-4, खण्ड-3, अक्टूबर - दिसम्बर 2025 E-ISSN : 2584-2900

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में आदिवासियों का योगदान: छत्तीसगढ़ के संदर्भ में एक ऐतिहासिक अध्ययन

आलोक कुमार पाण्डेय
सह प्राध्यापक, इतिहास विभाग
श्री कृष्णा विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

शोध सार

भारत का स्वतंत्रता आंदोलन एक ऐसा जन आंदोलन था जो जैसे-जैसे बढ़ता गया वैसे-वैसे उसकी शक्ति बढ़ती गई। यह आंदोलन प्रदेशों और वर्गों के भेदभाव से ऊपर उठकर पूरे देश की जनता की संयुक्त इच्छा शक्ति की अभिव्यक्ति बन गया था। 1857 के पहले भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध आदिवासियों ने बार-बार विद्रोह किए थे जिनके फलस्वरूप आदिवासी क्षेत्रों में अंग्रेजों को अपनी सत्ता स्थापित करने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ा। ऐसे विद्रोह का तो संदर्भ भी आसानी से नहीं मिलता है। यद्यपि पूरे देश भर में 1857 के पहले और उसके बाद हुए स्वतंत्रता आंदोलन में आदिवासियों का योगदान महत्वपूर्ण था।

कुंजीभूत शब्द

स्वतंत्रता आंदोलन, आदीवासी, हलवा आदिवासी, बस्तर, सरगुजा, दंतेवाड़ा, प्लासी, ब्रिटिश सेना, जल, जंगल और जमीन, वनप्रबंधन।

शोध विस्तार

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास अत्यंत व्यापक, विविधतापूर्ण तथा बहुआयामी रहा है। सामान्यतः जब स्वतंत्रता संग्राम की चर्चा की जाती है, तो इसका प्रारंभ सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से माना जाता है। किंतु यह दृष्टिकोण अपूर्ण है, क्योंकि भारत में विदेशी शासन के विरुद्ध प्रतिरोध की भावना का उद्भव 1857 से बहुत पहले ही हो चुका था।[1] विशेष रूप से आदिवासी समाज ने ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध अपने स्वाभिमान, संस्कृति और

अस्तित्व की रक्षा हेतु निरंतर संघर्ष किया। दुर्भाग्यवश, मुख्यधारा के इतिहास लेखन में इन आदिवासी संघर्षों और उनके योगदान का उल्लेख प्रायः उपेक्षित रह गया है। इतिहास लेखन की परंपरा में कुछ निश्चित प्रदेशों, वर्गों अथवा व्यक्तियों के योगदान को बार-बार रेखांकित किया गया, जबकि आदिवासी समाज की देशप्रेम से ओतप्रोत संघर्षशील परंपरा को अपेक्षित महत्व नहीं दिया गया। जबकि वस्तुतः 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से पूर्व ही भारत के विभिन्न आदिवासी क्षेत्रों – जैसे संथाल, मुंडा, कोल, भील, गोंड, और खासी समाज – में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध अनेक सशस्त्र विद्रोह हुए थे। इन विद्रोहों ने न केवल ब्रिटिश सत्ता को चुनौती दी, बल्कि स्थानीय स्वशासन, सामाजिक एकता और स्वतंत्रता के मूल्यबोध को भी सशक्त किया।[2]

इन संघर्षों के परिणामस्वरूप अंग्रेजों को आदिवासी क्षेत्रों में अपनी सत्ता स्थापित करने में गहन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। यह तथ्य इस बात का प्रमाण है कि स्वतंत्रता के बीज भारतीय समाज की जड़ों में गहराई तक फैले हुए थे, और आदिवासी समाज ने इस चेतना को जीवित रखने में अग्रणी भूमिका निभाई। तथापि, मुख्यधारा के राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में इन योगदानों को पर्याप्त स्थान नहीं मिल पाया, जिससे इतिहास की एक महत्वपूर्ण धारा उपेक्षित रह गई। इस शोध पत्र में छत्तीसगढ़ क्षेत्र में हुए आदिवासी आंदोलनों को अध्ययन की विषय वस्तु के रूप में चुना गया है।[3]

सन 1757 में प्लासी के युद्ध को जीतने के बाद और 1765 में बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी हासिल करने के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी ने छत्तीसगढ़ को अपने कब्जे में करने के प्रयास शुरू किए थे। छत्तीसगढ़ के मध्य भाग के अधिकांश क्षेत्र पर नागपुर के मराठा शासको का अधिकार था और शेष क्षेत्रों में अलग-अलग देशी रियासतें थी। अंग्रेजों को पहली सफलता सन 1800 में मिली जब रायगढ़ के राजा ने कंपनी सरकार के साथ एक संधि कर रायगढ़ को कंपनी सरकार का हिस्सा बनाया। नागपुर में मराठा शासको के साथ 1818 में हुए युद्ध में पराजय के बाद मराठा राज्य पर अंग्रेजों का कब्जा हो गया और इसके साथ ही छत्तीसगढ़ के मध्य क्षेत्र पर अंग्रेज शासन करने लगे। बहरहाल छत्तीसगढ़ के दक्षिण में बस्तर तथा उत्तर मे

सरगुजा क्षेत्र में आदिवासियों ने अपने राज्यों को कंपनी सरकार की गुलामी से बचाने के लिए एक के बाद एक विद्रोह किए जिनमें से आठ विद्रोहों को उल्लेखनीय माना जाता है।[4]

हलवा आदिवासी युद्ध

आदिवासी विद्रोह में सन 1774 से लेकर 1779 तक हलवा आदिवासियों ने अंग्रेजों के विरोध जो युद्ध किया था वह अत्यंत रोमांचक और रक्त रंजित था। बस्तर पर कब्जा करने के लिए अंग्रेजों ने जयपुर के राजा और बस्तर के राजा के छोटे भाई दरियावदेव सिंह को साथ लिया और एक सम्मिलित सेना बनाकर 1774 में बस्तर के राजा अजमेर सिंह पर आक्रमण किया। अजमेर सिंह की सेना में हलवा आदिवासी थे और उन्होंने अंग्रेजी सेना को धूल चटा दी। यह युद्ध 1779 तक चला किंतु अंग्रेजों को सफलता नहीं मिली। बाद में दरियावदेव सिंह ने धोखे से अजमेर सिंह का वध कर दिया। अजमेर सिंह की मृत्यु के बाद हलवा सेना नेतृत्व विहीन हो गई और तब अंग्रेजी सेना ने बस्तर के हलवा आदिवासियों को चुन चुन कर मार डाला। यह नरसंहार इतनी बड़ी घटना थी कि जिसमें एक पूरी जाति का सफाया करने का तांडव किया गया। यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि अंग्रेजों के विरुद्ध पूरे भारत में किया जाने वाला यह पहला विद्रोह था और बस्तर के राजा अजमेर सिंह इसके पहले शहीद थे।[5]

सरगुजा विद्रोह

अंग्रेजों के विरुद्ध दूसरा विद्रोह 1792 में सरगुजा के अजीत सिंह ने किया था अंग्रेजों ने सरगुजा पर कब्जा करने का षड्यंत्र किया किंतु वह सफल नहीं हुए उसके बाद अंग्रेजों ने मराठा सेवा के साथ मिलकर अजीत सिंह पर आक्रमण किया अजीत सिंह की आदिवासी सेवा ने जमकर मोर्चा लिया इस युद्ध में अजीत सिंह शहीद हो गए।

भोपालपटनम विद्रोह

अंग्रेजों के विरुद्ध तीसरा विद्रोह बस्तर के भोपालपटनम में 1795 में हुआ। इस विद्रोह के जरिए बस्तर के शासक दरियावदेव के गोंड सैनिकों ने अंग्रेजों को बस्तर में प्रवेश करने से रोक दिया था।

परलकोट विद्रोह

आदिवासी विद्रोह की कड़ी में चौथा विद्रोह परलकोट में हुआ था। उस समय परलकोट बस्तर शासको का मुख्यालय था। बस्तर में अंग्रेजों को आने से रोकने के लिए गेंद सिंह के नेतृत्व में अबूझमाडिया आदिवासी ने संघर्ष किया। इस विद्रोह को दबाने के लिए चांदा से आधुनिक हथियार से युक्त अंग्रेजी सेना आई। 10 जनवरी 1825 को गेंद सिंह को गिरफ्तार कर उसके महल के सामने ही सरेआम फांसी पर लटका दिया गया।

कोल आदिवासी विद्रोह

पांचवा विद्रोह दिसंबर 1831 में छोटा नागपुर क्षेत्र में कोल आदिवासियों ने शुरू किया। आदिवासियों की भूमि को जबरदस्ती हथियाने के कारण उपजे असंतोष से इस विद्रोह का सूत्रपात हुआ था। यह विद्रोह 1932 तक चला और फिर इसे अंग्रेजों ने एक बड़ी सेना लाकर दबा दिया।[6]

बड़गढ़ विद्रोह

छठा विद्रोह 1833 में हुआ। जब अंग्रेज बड़गढ़ पर कब्जा करना चाहते थे। बड़गढ़ के राजा अजीत सिंह के नेतृत्व में रायगढ़ के आदिवासियों ने अंग्रेज सेना का जमकर विरोध किया इस संघर्ष में अजीत सिंह वीरगति को प्राप्त हुए।

तारापुर विद्रोह

सातवां विद्रोह बस्तर क्षेत्र में 1842 में तारापुर में हुआ। तारापुर में बस्तर के शासन भूपल देव का भाई दलगंजन सिंह तारापुर का प्रशासक था। दलगंजन सिंह ने अपने क्षेत्र में वार्षिक टैक्स बढ़ाना नामंजूर कर दिया। दलगंजन सिंह के इस व्यवहार को अंग्रेजों ने विद्रोह माना और उसे दबाने के लिए नागपुर से एक सेना भेजी। इस बीच क्षेत्र की आदिवासी जनता भी तैयार हो गई और उसने दलगंजन सिंह के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना का सामना किया। इस युद्ध में दलगंजन सिंह पराजित हुआ और उसे जेल में डाल दिया गया।

दंतेवाड़ा विद्रोह

आठवां विद्रोह दक्षिण बस्तर में दंतेवाड़ा में नरबलि की प्रथा को लेकर अंग्रेजों के आदेश के विरुद्ध आदिवासियों ने 1842 में किया। इस विरोध को रोकने के लिए अंग्रेजों की सेना नागपुर से आई। इस सेना से आदिवासियों ने जमकर संघर्ष किया। संघर्ष के बाद नरबलि प्रथा रुकी और दंतेवाड़ा में स्थाई सैनिक व्यवस्था कायम हो गई।[7]

अंग्रेजों द्वारा लगान वसूली के लिए की गई नई व्यवस्था, परंपरागत सामाजिक, धार्मिक और राज व्यवस्था को बदलने के प्रयासों, वन प्रबंधन के लिए लागू किए गए नए नियमों और मदिरा के निर्माण पर लगाई गई रोक के कारण आदिवासियों की जल, जंगल और जमीन की अपनी अनूठी संस्कृति प्रभावित हो रही थी। अंग्रेजों द्वारा इन उपायों का सहारा लेकर आदिवासियों की स्वाधीन चेतना को भी आहत किया गया था। इस तरह आदिवासियों ने अपनी संस्कृति और स्वायत्तता की रक्षा के लिए यह विद्रोह किए थे, जो छत्तीसगढ़ में अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता संग्राम की ऐतिहासिक विरासत है। भारत के इतिहास में 1857 के पहले छत्तीसगढ़ में आदिवासियों के द्वारा किए गए इन आठ विद्रोह का कोई उल्लेख नहीं मिलता। किंतु ये विद्रोह अंग्रेजों के विरुद्ध आदिवासियों के अथक और क्रांतिकारी संघर्ष का प्रमाण देते हैं।

संदर्भ

1. शर्मा, कैलाश चंद्र, भारत के आदिवासी आंदोलन और उनका इतिहास, नई दिल्ली राजकमल प्रशसन, पृष्ठ संख्या 45-52
2. ओझा, लक्ष्मण सिंह, छत्तीसगढ़ का स्वाधीनता संग्राम, रायपुर, छत्तीसगढ़ माटी प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 27-41
3. वर्मा आरसी, ट्राईबल मूवमेंट इन सेंट्रल इंडिया, दिल्ली मित्तल पब्लिकेशंस पृष्ठ संख्या 63-70
4. प्रसाद बिंदेश्वर द ट्राईबल रिवॉल्ट्स इन इंडिया, पटना, लोक भारती प्रकाशन पृष्ठ संख्या 112-118

5. ठाकुर हेमंत कुमार, छत्तीसगढ़ के आदिवासी और स्वतंत्रता आंदोलन, केंद्रीय साहित्य अकादमी रायपुर, पृष्ठ संख्या 34-56 6. श्रीवास्तव एस.पी ., भारत में आदिवासी संघर्ष का इतिहास, भारतीय विद्या संस्थान, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या 78-85
6. सिंह के एस, ट्राइबल मोमेंट्स इन इंडिया ए हिस्टॉरिकल पर्सपेक्टिव ,न्यू दिल्ली मनोहर पब्लिशर्स, पृष्ठ संख्या 92-104

SKU SHODH SANCHAR शोध संचार